अध्याय-प्रथम

शोध परिचय

अध्याय- प्रथम

शोध परिचय

1.0 प्रस्तावना-

शिक्षक समाज और राष्ट्र के निर्माण का मूलाधार है। शिक्षक पर ही समाज की उन्नती निर्भर होती है। भवन निर्माण में जो स्थान ईटों का है, राष्ट्र के निर्माण में वहीं स्थान शिक्षक का है, क्योंकि शिक्षक बालकों को समुचित शिक्षा प्रदान कर देश के भविष्य को उज्ज्वल करता है।

भारतीय समाज में गुरू का सर्वोच्च स्थान है क्योंकि वह शिक्षा के माध्यम से समाज को विकासोन्मुख बनाता है। अतः शिक्षा के उद्देश्य देश, काल और परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं, जो समाज की परिवर्तित आवश्यकताओं के पूरक होते है। शिक्षा हमें इस योग्य बनाता है कि परिस्थितियों के अनुरूप उचित निर्णय लेकर सही मार्ग का चयन करें और जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में, विभिन्न अवसरों पर सही विकल्प का चुनाव कर सकें।

शिक्षक वह धुरी है जिसके चारों और शैक्षिक गतिविधियाँ क्रियाशील रहती है। उसे 'राष्ट्र' का निर्माता कहा जाता है। किसी भी राष्ट्र की शिक्षा प्रणाली में सबसे महत्वपूर्ण स्थान शिक्षक का होता है। शाला की उन्नति अथवा विकास के लिए उचित पाठ्यक्रम, श्रेष्ठ पाठ्यपुस्तक, उत्तम शिक्षा साधन तथा उपयुक्त शालागृहों की आवश्यकता तो है, परन्तु उससे कहीं ज्यादा आवश्यकता है उपयुक्त अध्यापकों तथा अध्यापिकाओं की। वे ही शिक्षा पद्धति को चलाते है। अच्छे शिक्षकों के अभाव में किसी भी देश की शिक्षा पद्धति निर्जीव और

निस्तेज हो जाती है। इसी तथ्य को समझकर प्राचीन भारत में शिक्षकों को एक विशिष्ठ स्थान था।

बालक के सर्वांगीण विकास में शिक्षक को बड़ा ही महत्वपूर्ण कार्य करना पड़ता है। शिक्षक ही वास्तव में बालक का समुचित शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, सामाजिक एवं संवेगात्मक विकास कर सकता है। विद्यालय प्रांगण में भी शिक्षक को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी पड़ती है। संपूर्ण विद्यालय योजनाओं को वही व्यावहारिक रूप देता है। अच्छी से अच्छी शिक्षण पद्धति प्रभाव रहित हो जाती है, यदि शिक्षक उसे सही ढंग से प्रयोग न करें। जिस प्रकार विद्यालय जीवन में प्रधानाध्यापक मस्तिष्क के रूप में होता हैं, शिक्षक आत्मा स्वरूप होता है, आत्मा बिना शरीर (विद्यालय) निर्जीव होता है।

उपयुक्त कथन से स्पष्ट हो जाता है कि विद्यालय जीवन में शिक्षक को अति महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। शिक्षक को विद्यालय जीवन में ही क्यों, संपूर्ण समाज में अति महत्वपूर्ण एवं सम्मानप्रद स्थान प्राप्त है।

प्राचीन समाज में शिक्षक का क्या महत्व था और आज के समाज में क्या महत्व है, यह हम निम्न बिन्दुओं से मालुम हो सकता हैं।

1.1 वैदिक काल में शिक्षक का स्थान और शिक्षा का महत्व–

ऋग्वेदकाल में शिक्षक का बड़ा महत्व था। इस युग में उच्च विचार, ज्ञान की महिमा, त्यागमय जीवन, आध्यात्मिक चिंतन और भौतिक आकर्षण के प्रति विरक्ति मनुष्य के जीवन के मूल्य थे। गुरुकुल अथवा गुरू के सानिध्य में शिष्य विद्याग्रहण करते थे। सामान्यतः विद्यार्थी के लिए संध्या–वंदन, पूजा पाठ, स्नान, सच्चरित्रता आदि के अंतर्गत ग्रहित किये गये थे। प्रायः पांच वर्ष की अवस्था में

विद्या का आरंभ माना जाता था। प्रायः छात्र उपनयन संस्कार के पश्चात् गृह त्यागकर गुरूकुल में आकर शिक्षा ग्रहन करता था। गुरू का स्थान आदरयुक्त, गरिमामय एवं प्रतिष्ठित था। ऋग्वेद में इंद्र और अग्नि जैसे देवताओं को गुरू अथवा आचार्य के रूप में बताया गया है। वस्तुतः ऋग्वैदिक काल में आचार्य दिव्य ज्ञान के प्रतिक थे। गुरू त्याग, तपस्या, संयम आदि गुणों के लिए प्रसिद्ध थे। शिष्य अपने गुरू को देवता तुल्य समझते थे और गुरू भी निःस्वार्थ भावना से शिष्य को शिक्षा देते थे। गुरू-शिष्य में मधुर संबंध हुआ करते थे।

1.2 बौद्ध काल में शिक्षक का स्थान और शिक्षा का महत्व-

बौद्ध काल में गुरू का स्थान समाज में उच्च था। छात्र तथा अध्यापकों के संबंध अत्यंत मधुर, पवित्र, तथा स्नेहपूर्ण थे। अध्यापकों का मुख्य उत्तरदायित्व छात्रों के सर्वांगीण विकास की राह प्रशस्त करना था। छात्रों का मुख्य उद्देश्य आचार्यो की सेवा करना था। शिक्षक अपने विशाल व्यक्तित्व, विद्वत्ता, उच्च चरित्र, तपस्या, साधना, संयम, अनुशासन तथा गरिमापूर्ण व्यवहार से छात्रों पर अमिट प्रभाव छोड़ते थे। भारत वर्ष में सदैव से ही पवित्रता व सात्विकता का बोल बाला रहा था, परन्तु बौद्ध धर्म ने और भी अधिक पवित्रता पर बल दिया।

1.3 मुस्लिम काल में शिक्षक का स्थान और शिक्षा का महत्व-

मुस्लिम काल में शिक्षा व्यवस्था के लिए दो मुख्य अभिकरण मकतब और मदारसा थे। मकतबों में प्रारंभिक शिक्षा दी जाती थी, जबकि मंदारसों में उच्च शिक्षा की व्यवस्था थी। मुस्लिम काल में भी प्राचीन काल के समान अध्यापक तथा छात्रों के संबंध बड़े घनिष्ठ होते थे। शिक्षकों की विद्वत्ता अत्यंत उच्च कोटी की होती थी। उनको समाज में सम्माननीय स्थान दिया जाता था। यद्यपि शिक्षकों को वेतन अत्यंत

अल्प मिलता था। परन्तु मुस्लिम काल के अंतिम वर्षो में अध्यापक छात्र संबंधों में घनिष्ठता तथा गुरूभक्ति के आदर्श लुप्त होने लगे थे। तथा छात्र में अनुशासनहीनता दृष्टिगोचर होने लगी थी। औरंगजेब ने भरे दरबार में अध्यापक शाहआलेम का अपमान किया था।

1.4 ब्रिटिश काल में शिक्षा और शिक्षक का स्थान–

ब्रिटिश काल में भारत में आधुनिक शिक्षा प्रणाली का श्री गणेशः हुआ। युरोपियन साहित्य तथा विज्ञान के संपर्क में भारतवासी इसी काल में आयें। आधुनिक प्रकार के विश्वविद्यालयों की स्थापना तथा बेसीक शिक्षा की संकल्पना इसी काल की महत्वपूर्ण देन है। ब्रिटिश कालीन शिक्षा के उद्देश्य– भारतीयों का बौद्धिक तथा नैतिक विकास करना, भारत में युरोपियन साहित्य तथा विज्ञान का प्रसार करना भारतीयों का आर्थिक विकास करना और ब्रिटिश शासन की सहायता के लिए भारतीयों को प्रशिक्षित करना। ब्रिटिश काल में शिक्षा संस्थायें तथा नये विश्वविद्यालय की स्थापना की गयी। अध्यापक प्रशिक्षण ब्रिटिश काल में दिया जाता था। प्राथमिक तथा निम्न माध्यमिक स्तर की कक्षाओं के अध्यापकों को नवीन शिक्षण विधियाँ, शिक्षा मनोविज्ञान तथा विद्यालय प्रशासन तथा उसका ज्ञान कराकर उन्हें शिक्षण कला में निपुण किया जाता था। ब्रिटिश कालीन शिक्षा के प्रारंभिक वर्षो में नारी शिक्षा में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई तथा नारी शिक्षा लगभग उपेक्षणीय बनी थी। परन्तु बाद में नारी शिक्षा के लिए प्रयास किये गये। ब्रिटिश काल में छात्र अध्यापक संबंध मात्र औपचारिक रह गये थे। प्राचीन व मध्य काल की घनिष्ठता व स्नेहपूर्णता लगभग समाप्त हो गया थी।

1.5 प्राचीन काल और आधुनिक काल में शिक्षा में बदलाव–

प्राचीन काल में शिक्षा में गुरू का स्थान बड़ा ही महत्वपूर्ण था। शिक्षा सिर्फ उच्च वर्ग के लोगों के लिए थी। शिक्षा जातीय बंधन में फंसी हुई थी। गुरू शिक्षा देने के बदले पैसे नहीं लेते थे। ज्ञान के मूलकेन्द्र आश्रम थे। आधुनिक काल में शिक्षा में अनेक बदलाव आये। शिक्षक पैसे के लिए ज्ञान देने लगे। अन्य जाति के लोग भी शिक्षा में आने लगे, स्त्रियों को भी शिक्षा का अधिकार मिला, ग्रामीण क्षेत्र के लोग भी शिक्षा में आने लगे। जिनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है वे लोग भी शिक्षा में आने लगे। जिस तरह छात्रों की संख्या बढ़ने लगी उसी तरह शिक्षकों की संख्या पढ़ने के लिए ज्यादा लगने लगी। इसी कारण अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालय (बी.एड्.,डी.एड्.) की संख्या बढ़ने लगी। महाविद्यालय में ग्रामीण क्षेत्र से, कनिष्ठ जाति से और स्त्रीयों की संख्या बढ़ने से उनकी सामाजिक, सांस्कृतिक रूपरेखा भी बदलने लगी। प्राचीन काल में शिक्षक की जो अभिवृत्ति, अभिरूचि थी वो भी बदलने लगी।

इसी तरह आधुनिक काल में शिक्षा में अनेक बदलाव आने लगे।

1.6 शिक्षक और अध्यापन व्यवसाय–

शिक्षा में शिक्षक एवं अध्यापन व्यवसाय एक सिक्के के दो पहलू है। जिनको अलग करना असंभव है। अध्यापन का अर्थ है कि छात्रों को कुछ विशिष्ठ विषयों का ज्ञान प्रदान करना है। शिक्षा में वस्तुतः हम इस ज्ञान को सम्मिलित कर लेते हैं किन्तु यहाँ तक सीमित नहीं रहते शिक्षा एक त्रिधृवी प्रक्रिया है उसके तीन मुख्य घटक होते है अध्यापक,पाठ्यक्रम, छात्र। शिक्षा में शैक्षिक क्रियायें जो

पाठ्यक्रम से संबंधित होती है तथा सहशिक्षा क्रियायें जिसमें छात्रों के अध्यापकों के अनुभव विश्व तथा व्यक्तित्व के घटकों से संबंधित क्रियायें होती है। शिक्षा बालकों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास है और अध्यापकों को सदा केवल विषयों के अध्यापन तक ही सीमित न रहकर बालक के सर्वांगीण विकास में योगदान देने के लिए तत्पर रहना चाहिए। सर्वांगीण विकास का अर्थ होता है, ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक पक्षों का विकास करना। यहॉ शिक्षा के उद्देश्य होते हैं। भावात्मक पक्ष सबसे महत्वपूर्ण समझा जाता है। इसका विकास करना कठिन होता है तथा समय भी अधिक लगता है। इसके विकास के लिए संवेदनशीलता भी चाहिए। सर्वप्रथम भावना का विकास करने का प्रयास किया जाता है, जब भावनाओं में स्थिरता तथा गहनता हो जाती है तब भावनायें अभिवृत्ति का रूप लेती है।

किसी भी राष्ट्र का हित उस राष्ट्र के अध्यापक के हित पर निर्भर है। एक अध्यापक अपने जीवन काल में हजारों विद्यार्थियों को शिक्षित करता है। अतः अध्यापक ही हमारे भविष्य का संरक्षक है और इसलिए अध्यापक की ओर ध्यान देना अपने भविष्य की ओर ध्यान देना है। यह निर्विवाद सत्य है कि शिक्षा के स्तर और राष्ट्रीय विकास में शिक्षा के योगदान को जितनी भी बाते प्रभावित करता है, उनमें शिक्षकों के गुण, उनकी क्षमता और उनका चरित्र सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। अतः आवश्यक है कि योग्य अध्यापक हो, उन्हें सर्वोत्तम व्यावसायिक साधन उपलब्ध किये जाये और ऐसी संतोषप्रद स्थितियॉं बनायी जाये जिनमें वे प्रभावी ढंग से काम कर सकें।

1.7 शिक्षक अभिवृत्ति–

किसी वस्तु व्यक्ति अथवा विचार के प्रति व्यक्ति किस प्रकार का व्यवहार करेगा यह बहुत व्यक्ति से उनके प्रति बनी अभिवृत्तियों पर

निर्भर करता है। व्यवहार ही नहीं व्यक्ति का संपूर्ण व्यक्तित्व भी उसकी अभिवृत्तियों में अनुकूल ही ढ़लता है। जो कुछ भी व्यक्ति सीखता है और आदतों तथा रूचि आदि को ग्रहण करता है वे सभी उसकी अभिवृत्तियों द्वारा प्रभावित होता है।

ट्रेलर्स ने कहा कि "व्यवहार को कोई एक दिशा प्रदान करने वाली प्रतिक्रिया के लिए आवश्यक, तत्परता प्रदान करने वाली प्रतिक्रिया के लिए आवश्यक तत्परता का नाम अभिवृत्ति है।" अर्थात् अगर किसी को किसी वस्तु के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति है तो वह उस वस्तु के प्रति आकर्षित होगा, उसे पाने के लिए प्रयत्न करेगा और अगर नकारात्मक अभिवृत्ति हुई तो वह उससे दूर भागेगा और यहॉ तक कि वह उसके नाम से ही चिढ़ने या उत्तेजित होने लगेगा।

व्हीरनर ने कहा कि "अभिवृत्ति (शरीर अथवा मस्तिष्क की) पूर्व नियोजन अथवा तत्परता की वह अवस्था है जो सार्थक उद्दिपकों के प्रति पूर्व निश्चित तरीके से प्रतिक्रिया करने में सहायक होती हैं। अर्थात् अभिवृत्ति को ऐसी प्रवृत्ति या तैयारी की मानसिक या शारीरिक अवस्था मानती है जो व्यक्ति को किसी एक परिस्थिति में एक निश्चित प्रकार का व्यवहार करने को प्रेरित करती है। व्यक्ति की किसी विशेष उद्दिपक के प्रति किस प्रकार की प्रतिक्रिया होगी, यह उसके प्रति बनी अभिवृत्ति पर निर्भर करेगा।

परिणाम स्वरूप अभिवृत्ति का आशय शिक्षकों के द्वारा व्यक्ति मन से लिया जाता है। शिक्षकों का दृष्टिकोण जो किसी प्रकार के व्यवहार को दिशा प्रदान करने वाली वह अर्जित प्रवृत्ति है जो शिक्षकों को किसी विशेष वस्तु या वस्तुओं के प्रति एक निश्चित प्रकार का व्यवहार करने को तत्पर करती है। बशर्ते कि वातावरण जन्म परिस्थितियों में कोई प्रतिकूल परिवर्तन न हो यह पूर्वधारणा होती है कि

जो उनके प्रति स्वीकारात्मक या नकारात्मक ढंग से प्रतिक्रियायें करवाती है।

1.8 समस्या का कथन–

"बी.एड्. शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों की सामाजिक–सांस्कृतिक रूपरेखा एवं अध्यापन अभिवृत्ति के मध्य संबंध का अध्ययन"

1.9 शोधकार्य में प्रयुक्त शब्दावली व अर्थ–

शिक्षा का अर्थ–

प्राचीन भारत में शिक्षा को विद्या के नाम से जाना जाता था। विद्या शब्द की उत्पत्ति विद् धातु से हुई है, जिसका अर्थ है जानना। इस प्रकार विद्या शब्द का अर्थ ज्ञान से है। हमारे प्राचीन में ज्ञान को मानव का तृतीय नेत्र कहा गया है जो अज्ञानता दूर कर सत्य के दर्शन कराने में सहायक होता है।

❖ अभिवृत्ति–

अनुसंधानों की विभिन्न अवस्थाओं में महत्वपूर्ण विषयों व वस्तुओं के प्रति व्यक्तियों की अभिवृत्ति का अध्ययन किया गया है। कुछ अभिवृत्तियों अल्पावस्था में सीखी जाती है और स्थिर बनी रहती है, कुछ परिवर्तित होती है और किशोरावस्था और युवावस्था में अर्जित की जाती है और बदलती रहती है। सामाजिक परिस्थितियों के प्रति उनकी अभिवृत्तियाँ जीवन की प्रथमावस्था में ही बन जाती है और बनी रहती है तथा अधिगम से वे स्थिर और स्थायी बन जाती है। प्रस्तुत अनुसंधान में अभिवृत्तियों यथा–अध्यापन अभिवृत्ति सामाजिक, सांस्कृतिक रूपरेखा संबंधीको अध्ययन हेतु चयनित किया गया है।

❖ **अध्यापन –**

किसी शैक्षिक संस्था में छात्रों को पढ़ाने या सिखाने की क्रिया। व्यापक रूप में इसका तात्पर्य होता है ऐसी परिस्थितियों, दशाओं तथा क्रियाओं की व्यवस्था करने से जिससे बालक सीख सके।

संयुक्त प्रयास से शिक्षण प्रक्रिया के चलाने के लिए अध्ययन–अध्यापन पद का प्रयोग किया जाता है, जिसमें अध्ययन का दूसरा स्थान है। प्रथम आवश्यक कार्य है, छात्र का स्वयं का सीखना और उनमें सहायता देने का कार्य शिक्षक का है।

❖ **शिक्षक –**

किसी शिक्षा संस्था में बालकों या विद्यालयों को पढ़ाने का कार्य करने वाला व्यक्ति। इसे अध्यापन करने के लिए स्वयं उपयुक्त शिक्षा प्राप्त करना तथा किसी संस्था से व्यावसायिक प्रशिक्षण लेना आवश्यक होता है।

❖ **सामाजिक सांस्कृतिक रूपरेखा–**

किसी भी समाज की सामाजिक सांस्कृतिक रूपरेखा अलग–अलग रहती है। सामाजिक, सांस्कृतिक रूपरेखा जानने के लिए समाज के या लोगों के आर्थिक परिस्थिति, भौगोलिक परिस्थिति, कौनसे जाती के है, उनके समाज में कितने पुरूष है और कितनी स्त्री है, उनके सण–उत्सव, उनका रहन–सहन, उनका पोशाख यह जानना बहुत जरूरी होता है। इससे समाज की सामाजिक, सांस्कृतिक रूपरेखा समझ में आती है।

1.10 शोध के चर–

- **स्वतंत्र चर –**

  1. लिंग 2. क्षेत्र 3. जाति

- **आश्रित चर –**

  अभिवृत्ति

1.11 प्रस्तुत शोध अध्ययन की आवश्यकता –

वर्तमान स्थिति के अनुसार कोई भी माता–पिता अपने बेटे को शिक्षक नहीं बनाना चाहते है। उसमें शहरी माता–पिता ज्यादा आते है। सभी को लगता है कि अपना बेटा डॉक्टर, इंजीनियर, वकील, अधिकारी बन जाये, इसलिए शिक्षा में बहुत से परिवर्तन हो रहे है। पहले समय में स्त्रीयाँ शिक्षा में ज्यादा नहीं आती थी लेकिन अभी शिक्षा में स्त्रीयाँ ज्यादा आ रही है। ग्रामीण क्षेत्र के बच्चे शिक्षा में अभी ज्यादा आ रहे है, इस शोध के माध्यम से यह जान सकते है कि ग्रामीण क्षेत्र के लोग बी.एड्. की शिक्षा में ज्यादा आ रहे हैं, इसीलिए पाठ्यक्रम में बदल करना चाहिए क्योंकि उनके अनुरूप पाठ्यक्रम बनाया तो वह बच्चों को अच्छी तरह पढ़ा सकते हैं। उनको ही पाठ्यक्रम समझ नहीं आयेगा तो वह बच्चों को अच्छी तरह पढ़ा नहीं सकते।

हम अध्यापन अभिवृत्ति से बी.एड्. में जो छात्र आये हैं, उनका अध्यापन के प्रति, अपने व्यवसाय के प्रति कितना लगाव है, यह जान सकते हैं। उनका लिंग के आधार पर संबंध, ग्रामीण और शहरों के आधार पर संबंध, जाति के आधार पर संबंध की क्या अभिवृत्ति आती है, उनमें अंतर आता है, या नहीं आता यह देख सकते है। शासकीय महाविद्यालय और अशासकीय महाविद्यालय इन दोनों महाविद्यालय के

छात्रों में अभिवृत्ति में क्या संबंध आता है यह इस अनुसंधान के द्वारा हम समझ सकते हैं।

1.12 समस्या की सीमांकन –

- किसी का सामाजिक–सांस्कृतिक रूपरेखा का अध्ययन करना कठिन और मुश्किल काम होता है, लेकिन इस अनुसंधान के द्वारा सामाजिक–सांस्कृतिक रूपरेखा का अध्ययन लिंग, क्षेत्र, जाति के आधार पर किया है, यह भी इसकी परिसीमा है।
- मनुष्य की अभिवृत्ति कब बदल जाये वे कोई भी नहीं बता सकता, लेकिन इस अनुसंधान में हम डॉ. एस.पी. अहलूवालिया द्वारा बनाई गई अध्यापक अभिवृत्ति परीक्षण के द्वारा अभिवृत्ति का अध्ययन करेंगे, यह भी इस अनुसंधान का सीमांकन है।
- महाराष्ट्र के सभी जिले में बी.एड्. महाविद्यालय है, परन्तु शोधकर्ता ने सिर्फ अहमदनगर जिले के दो महाविद्यालय को चयनित किया है, इसमें एक शासकीय और दूसरा अशासकीय महाविद्यालय है।
- सामाजिक–सांस्कृतिक रूपरेखा का अध्ययन करने के लिए शोधकर्ता ने दो महाविद्यालयों का छः साल के शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों का चयन किया हैं।
- अध्यापन अभिवृत्ति का अध्ययन करने के लिए शोधकर्ता सिर्फ 2008–09 साल में पढ़ रहे शिक्षक–प्रशिक्षणार्थियों का चयन किया है।

1.13 शोध के उद्देश्य –

- शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों के सामाजिक–सांस्कृतिक रूपरेखा के संदर्भ में लिंग, स्थान, जाति इसका शिक्षा में परिवर्तन का अध्ययन करना।

- शिक्षक प्रशिक्षाणार्थियों के अध्यापन अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
- शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों के सामाजिक–सांस्कृतिक रूपरेखा व अध्यापन अभिवृत्ति के मध्य संबंध का अध्ययन करना।

1.14 शोध कार्य की परिकल्पनाएँ–

- शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में स्त्रीयों की सहभागिताएँ बढ़ रही है।
- शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में कनिष्ठ जाति की सहभागिताएँ बढ़ रही है।
- शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में ग्रामीण क्षेत्र की सहभागिताएँ बढ़ रही है।
- शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में लिंग के आधार पर अध्यापन अभिवृत्ति में सार्थक अंतर नहीं है।
- शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में भौगोलिक क्षेत्र के आधार पर अध्यापन अभिवृत्ति में सार्थक अंतर नहीं है।
- शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में जाति के आधार पर अध्यापन अभिवृत्ति में सार्थक अंतर नहीं है।
- शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में शासकीय और अशासकीय महाविद्यालय के प्रकार के आधार पर अध्यापन अभिवृत्ति में सार्थक अंतर नहीं है।